

अपभ्रंश एवं हिन्दी जैन साहित्य में शोध के नये क्षेत्र

डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल

विगत ५० वर्षों में अपभ्रंश का विशाल साहित्य प्रकाश में आया है। इस साहित्य को प्रकाश में लाने की दृष्टि से जिन विद्वानों ने सर्वप्रथम खोज कार्य किया उनमें पं० नाथूराम प्रेमी, डॉ. हीरालाल जैन, महापंडित राहुल सांकृत्यायन, मुनि जिनविजय जी, डॉ. ए० एन० उपाध्ये एवं डॉ. परशुराम वैद्य के नाम उल्लेखनीय हैं। सन् १९५० में श्री महावीर जी क्षेत्र के साहित्य शोध विभाग की ओर से प्रकाशित प्रशस्ति संग्रह में सर्वप्रथम ५० अपभ्रंश ग्रन्थों की एक साथ प्रशस्तियों को देखकर हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपनी 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' नामक कृति में जो विचार व्यक्त किये थे वे निम्नप्रकार हैं :

“सन् १९५० में श्री कस्तूरचन्द कासलीवाल एम० ए०, शास्त्री के सम्पादकत्व में अमेर शास्त्र भण्डार (जयपुर) के ग्रन्थों का एक प्रशस्ति संग्रह प्रकाशित हुआ है जिसमें लगभग ५० अपभ्रंश ग्रन्थों की प्रशस्तियाँ संग्रहीत हैं। इनमें से कुछ का तो विद्वानों को पहिले से भी पता था कुछ नई हैं। इनमें स्वयम्भू, पुष्पदन्त, पद्मकीर्ति, वीर, नयनन्दि, श्रीधर, श्रीचन्द्र, हरिषेण, अमरकीर्ति, यशकीर्ति, धनपाल, श्रुतकीर्ति और माणिकराज, रङ्गू आदि की कृतियाँ हैं। अधिकांश रचनाएँ १३ वीं शताब्दी के बाद की बताई गई हैं। उसके बाद भी १६ वीं शताब्दी तक अपभ्रंश में रचनाएँ होती रहीं। इस प्रशस्ति संग्रह के रङ्गू, यशकीर्ति, धनपाल, श्रुतकीर्ति और माणिकराज चौदहवीं और उसके बाद की शताब्दियों के कवि हैं।

“ये ग्रन्थ अधिकतर जैन ग्रन्थ भण्डारों से ही प्राप्त हुए हैं और अधिकांश जैन कवियों के लिखे हुए हैं। स्वभावतः ही इनमें जैनधर्म की महिमा गाई है और उस धर्म के स्वीकृत सिद्धान्तों के आधार पर ही जीवन बिताने का उपदेश दिया गया है। परन्तु इस कारण से इन पुस्तकों का महत्त्व कम नहीं हो जाता। परवर्ती हिन्दी साहित्य के काव्य रूप के अध्ययन करने में ये पुस्तकें बहुत सहायक हैं।”

डॉ. द्विवेदी जी की उक्त धारणा के पश्चात् अपभ्रंश साहित्य की ओर विद्वानों का और अधिक ध्यान जाने लगा और सर्व प्रथम इतिहास के रूप में डॉ.

हरिवंश कोछड़ ने “अपभ्रंश साहित्य” शीर्षक से शोध कार्य किया और आमेर शास्त्र भण्डार के प्रशस्ति संग्रह को ही अपनी खोज का मुख्य आधार बनाया। यही नहीं डॉ. रामसिंह तोमर, डॉ. देवेन्द्र कुमार इन्दौर, डॉ. देवेन्द्र कुमार नीमच एवं परमानन्द शास्त्री देहली एवं डॉ. नेमीचन्द्र शास्त्री, डॉ. राजाराम जैन, डॉ. भायाणी ने अपभ्रंश साहित्य को प्रकाश में लाने का अपने जीवन का मुख्य लक्ष्य बनाया और समय-समय पर अपभ्रंश कृतियों पर लेख लिखकर विश्वविद्यालयों में शोध छात्रों का इस ओर ध्यान आकृष्ट किया। अब तक अपभ्रंश की जिन कृतियों का प्रकाशन हो चुका है उनमें महाकवि पुष्पदन्त के महापुराण, जसहर चरिउ, णायकुमार चरिउ, स्वयंभू का पउमचरिउ, वीर का जंबूसामि चरिउ, धनपाल का भविष्यदत्त कहा, अमरकीर्ति का छक्कम्मोपएस तथा महाकवि रङ्गू के ग्रन्थ उल्लेखनीय हैं। ये सभी अपभ्रंश भाषा की उच्च स्तरीय रचनाएँ हैं जिनके अध्ययन एवं मनन से भारतीय संस्कृति एवं विशेषतः जैन संस्कृति का परिज्ञान होता है। अपभ्रंश साहित्य एवं काव्यों की विशाल संख्या को देखते हुए ये सभी प्रकाशन आटे में नमक के बराबर हैं। वास्तव में देखा जावे तो अपभ्रंश भाषा की कृतियों का अभी तो पूरा सर्वेक्षण भी नहीं हो सका है, क्योंकि राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश एवं देहली के शास्त्र भण्डारों के सूचीकरण का अभी पूरा कार्य होना शेष है। फिर भी जितनी संख्या में अपभ्रंश साहित्य सामने आया है वह अपने आप में महत्वपूर्ण है। डॉ. देवेन्द्र कुमार शास्त्री ने अपभ्रंश के १५० कवियों की तीन सौ रचनाओं और विभिन्न भण्डारों में संग्रहीत उनकी एक सहस्र प्रतियों का विवरण संकलित किया है। साथ ही इन्होंने अपभ्रंश भाषा से सम्बन्धित और प्रकाशित सामग्रियों का उल्लेख “अपभ्रंश भाषा और साहित्य की शोध प्रवृत्तियाँ” पुस्तक में किया है।

इधर विश्वविद्यालयों में अपभ्रंश साहित्य पर जो शोध कार्य हो रहा है इसकी गति बहुत ही धीमी है। इसलिए अपभ्रंश साहित्य पर शोध कार्य के लिए विशाल क्षेत्र शोधार्थियों के समक्ष पड़ा हुआ है। अभी तो अधिकांश उपलब्ध कृतियों का सामान्य अध्ययन भी नहीं हो सका है क्योंकि जो कुछ अध्ययन सामने आया है वह सब प्रायः ग्रंथ प्रशस्तियों के आधार पर लिखा हुआ है। अपभ्रंश साहित्य चरित प्रधान साहित्य है। उसमें अधिकांश रचनाएं नायक के समग्र जीवन को प्रस्तुत करती हैं इसलिये उसमें प्रबन्ध काव्य अधिक हैं खण्ड काव्य कम हैं। ८वीं शताब्दी से लेकर १५वीं शताब्दी तक अपभ्रंश में साहित्य निर्माण की जो धारा बही और उसमें

महाकवि स्वयम्भू, पुष्पदन्त, वीर, नयनन्दि, धवल, धनपाल, गणि देवसेन, यशकीर्ति एवं रङ्गू जैसे महाकवि हुए जिनके काव्यों की तुलना किसी भी अन्य भाषा के काव्यों से की जा सकती है लेकिन अभी तक इन महाकवियों में से २-३ को छोड़कर शेष का पूरा मूल्यांकन भी नहीं हो पाया है।

अभी तो हम प्रशस्ति संग्रहों के आधार पर उनकी कृतियों के नाम मात्र जान सके हैं। इसलिए अपभ्रंश साहित्य में शोधार्थियों के लिए विपुल क्षेत्र पड़ा हुआ है जिनमें कवियों का विस्तृत जीवनवृत्त, इनका काव्य निर्माण की दृष्टि से मूल्यांकन, अन्य कवियों से तुलनात्मक अध्ययन, उनके काव्यों का सांस्कृतिक एवं भाषागत अध्ययन, रस, अलंकार, छन्द की दृष्टि से काव्यों का महत्व आदि विविध रूपों में काव्यों का अध्ययन होना शेष हैं। वास्तव में अपभ्रंश साहित्य का जितना गहन अध्ययन होगा भारतीय साहित्य में जैन साहित्य को उतना ही अधिक स्थान प्राप्त होगा।

यहाँ मैं एक बात की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ कि अभी तक राजस्थान, मध्य प्रदेश, देहली एवं उत्तर प्रदेश के कुछ ग्रन्थागारों का भी पूरा सूचीकरण का कार्य नहीं हो सका है। राजस्थान का प्रसिद्ध ग्रन्थागार नागौर का भट्टारकीय शास्त्र भण्डार, कुचामन तथा अन्य कुछ नगरों के शास्त्र भण्डारों की खोज होना आवश्यक है इन भण्डारों में सम्भवतः अपभ्रंश की कुछ और भी कृतियाँ संग्रहीत हों। जिनकी प्राप्ति के पश्चात् शोध के और भी नये क्षेत्र खुल सकते हैं।

अपभ्रंश साहित्य के प्रकाशन एवं उस पर शोध कार्य की अत्यधिक आवश्यकता है। एक एक ग्रन्थ के सम्पादन को लेकर एक एक शोध प्रबन्ध लिखा जा सकता है। क्योंकि अपभ्रंश हिन्दी की पूर्ववर्ती जननी मानी जाती है इसलिये विश्वविद्यालयों के प्राकृत, संस्कृत एवं हिन्दी विभागों में अपभ्रंश भाषा साहित्य पर शोध कार्य हो सकता है। अब मैं आपके समक्ष कुछ ऐसे विषयों का नामोल्लेख करता हूँ जिन पर शोध कार्य हो सकता है।

शोध के लिए कतिपय विषय

१. महाकवि स्वयम्भू-व्यक्तित्व एवं कृतित्व
२. रिटुणमिचरिउ का सांस्कृतिक अध्ययन
३. पउमचरिउ का सांस्कृतिक अध्ययन

परिसंवाद-४

४. अपभ्रंश का प्रथम और अन्तिम महाकाव्य
५. अपभ्रंश के प्रमुख महाकवि
६. अपभ्रंश के प्रतिनिधि कवि और उनके काव्य
७. महाकवि पदमकीर्ति—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
८. हरिषेण की धम्मपरिक्खा का आलोचनात्मक अध्ययन
९. वीर एवं शृङ्गार रस प्रधान जंबूसामि चरित का सांस्कृतिक अध्ययन
१०. महाकवि यशःकीर्ति—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
११. महाकवि धवल के हरिवंशपुराण का सांस्कृतिक अध्ययन
१२. अपभ्रंश का ऐतिहासिक काव्य : अमरसेनचरित—एक अध्ययन
१३. महाकवि श्रुतकीर्ति की अपभ्रंश साहित्य को देन
१४. अपभ्रंश के प्रबन्ध काव्य
१५. अपभ्रंश के खण्ड काव्य
१६. महाकवि नयनन्दि—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
१७. गणि देवसेन के सुलोचना चरित का सांस्कृतिक अध्ययन
१८. हिन्दी भाषा के विकास में अपभ्रंश की देन
१९. महाकवि धनपाल एवं उनका अपभ्रंश साहित्य
२०. महाकवि रङ्गू के काव्यों का सांस्कृतिक अध्ययन
२१. महाकवि जयमित्रहल—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
२२. छक्कम्मोपएस का सांस्कृतिक अध्ययन
२३. अपभ्रंश काव्यों में प्रयुक्त छन्दों का तुलनात्मक अध्ययन
२४. १४वीं शताब्दि के प्रतिनिधि अपभ्रंश काव्य

अपभ्रंश की तरह हिन्दी में भी जैन विद्वानों ने उस समय लिखना प्रारम्भ किया जब उसमें कलम चलाना पांडित्य से परे समझा जाता था तथा वे भाषा के पंडित कहलाते थे। यह भेदभाव तो महाकवि तुलसीदास एवं बनारसीदास के बाद तक चलता रहा। हिन्दी में सर्व प्रथम रास संज्ञक रचनाओं में काव्य निर्माण प्रारम्भ हुआ। जब अपभ्रंश भाषा का देश में प्रचार था तब भी जैन कवियों ने अपनी दूर-दर्शिता के कारण हिन्दी में भी लेखनी चलाई और साहित्य की सभी विधाओं को पल्लवित करते रहे। जिनदत्तचरित (सं० १३५४) एवं प्रद्युम्नचरित (सं० १४११) जैसी कृतियाँ अपने युग की प्रथम पुस्तकें हैं। महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने प्रद्युम्न

परिसंवाद-४

चरित को ब्रज भाषा का प्रथम महाकाव्य बतलाया है। जैन कवियों ने हिन्दी की सबसे अधिक एवं सबसे लम्बे समय तक सेवा की और उसमें अबाध गति से साहित्य निर्माण करते रहे। लेकिन हिन्दी के विद्वानों की जैन ग्रन्थागारों तक पहुँच नहीं होने के कारण वे उसका मूल्यांकन नहीं कर सके और जब हिन्दी साहित्य का क्रमबद्ध इतिहास लिखा जाने लगा तो जैन ग्रन्थागारों में संग्रहीत विशाल हिन्दी साहित्य को यह लिखकर साहित्य की परिधि से बाहर निकाल दिया कि वह केवल धार्मिक साहित्य है और उसमें साहित्यिक तत्त्व विद्यमान नहीं है। रामचन्द्र शुक्ल की इस एक पंक्ति से जैन विद्वानों द्वारा निर्मित हिन्दी साहित्य को राष्ट्रीय धारा में समाहित होने के दरवाजे बन्द हो गये और उसे आज तक भी राष्ट्रीय साहित्य में सम्मिलित नहीं किया जा सका है।

समय ने पल्टा खाया। जैन ग्रन्थागारों के ताले खुलने लगे। शनैः शनैः विद्वानों का जैन विद्वानों द्वारा रचित जैन कृतियों की ओर ध्यान जाने लगा। मिश्रबन्धु विनोद में कुछ जैन रचनाओं का परिचय दिया गया लेकिन स्वयं जैन विद्वान् भी अपने विशाल साहित्य से अपरिचित रहे। सर्व प्रथम स्व० पं० नाथूरामजी प्रेमी ने हिन्दी जैन साहित्य की ओर विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया। सन् १९४७ में कामता प्रसादजी का हिन्दी जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास और सन् १९५६ में डॉ. नेमीचन्द्र शास्त्री का हिन्दी जैन साहित्य परिशीलन (दो भागों में) प्रकाशित हुए। इसी बीच महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने स्वयम्भू के पउमचरित को हिन्दी का प्रथम महाकाव्य घोषित करके जैन हिन्दी साहित्य के महत्त्व को स्वीकार किया और हिन्दी जगत को उसे स्वीकार करने का आग्रह किया। लेकिन इतना होने पर भी अनेकान्त, जैन सिद्धान्त भास्कर, वीरवाणी, सम्मेलन पत्रिका, परिषद पत्रिका आदि में विभिन्न लेखों के प्रकाशन के अतिरिक्त जैन विद्वानों द्वारा रचित काव्य कृतियाँ सुसम्पादित होकर हिन्दी जगत के समक्ष प्रस्तुत नहीं की जा सकीं। इस दृष्टि से साहित्य शोध विभाग ने सर्व प्रथम सन् १९६० में प्रद्युम्नचरित एवं सन् १९६६ में जिनदत्तचरित का प्रकाशन कराकर इस क्षेत्र में पहल की। प्रद्युम्न चरित के प्रकाशन में हिन्दी जगत ने उसके महत्त्व को स्वीकार किया और सूरपूर्व ब्रज भाषा का उसे प्रथम काव्य स्वीकार किया गया तथा डॉ. वासुदेवसिंह ने अपने शोध प्रबन्ध में उस पर विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया। इधर सुप्रसिद्ध साहित्य सेवी श्री अगरचन्द जी नाहटा ने जैन

हिन्दी साहित्य पर अपने पचासों लेखों में विस्तृत प्रकाश डाला और उससे भी हिन्दी जैन साहित्य के प्रति विद्वानों का ध्यान आकर्षित करने में सफलता मिली। श्री महावीर क्षेत्र की ओर से ही राजस्थान के जैन सन्त एवं महाकवि दौलतराम कासलीवाल व्यक्तित्व एवं कृतित्व इन दो पुस्तकों के प्रकाशन से हिन्दी जैन साहित्य की विशालता को देखने का विद्वानों को अवसर प्राप्त हुआ और विश्वविद्यालयों में जैन हिन्दी साहित्य एवं कवियों पर पी-एच० डी० की उपाधि के लिए विषय स्वीकृत होने लगे। अब तक महाकवि बनारसीदास, भूधरदास, बुधजन, भगवतीदास, ब्रह्म जिनदास जैसे कुछ कवियों पर शोध प्रबन्ध विश्वविद्यालयों द्वारा स्वीकृत हो चुके हैं। लेकिन हिन्दी जैन साहित्य की विशालता को देखते हुए हमारे ये प्रयास भी आटे में नमक बराबर हैं।

सन् १९७७ में जयपुर में सम्पूर्ण हिन्दी जैन साहित्य को २० भागों में प्रकाशित करने के लिए श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी की स्थापना हिन्दी जैन साहित्य के प्रकाशन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कदम है जिसकी सफलता के लिए सभी विद्वानों का सहयोग अपेक्षित है। अकादमी की ओर से करीब ५०० जैन हिन्दी कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला जावेगा तथा ५० प्रमुख कवियों का विस्तृत अध्ययन एवं उनकी कृतियों का प्रकाशन किया जावेगा। अकादमी की ओर से अब तक प्रकाशित तीन भाग—महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एवं त्रिभुवनकीर्ति, कविवर बूचराज एवं उनके समकालीन कवि तथा महाकवि ब्रह्म जिनदास—व्यक्तित्व एवं कृतित्व—प्रकाशित हो चुके हैं जिनका सभी ओर से स्वागत हुआ है। अकादमी के चतुर्थ भाग भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र में ७० अन्य जैन कवियों का भी परिचय है।

मेरे उक्त इतिहास प्रस्तुत करने का अर्थ स्वयं के कार्य पर प्रकाश डालने का नहीं है लेकिन विद्वानों को हिन्दी जैन साहित्य की विशालता के दर्शन कराने का है।

हिन्दी जैन साहित्य की विशालता में किसी को सन्देह नहीं हो सकता लेकिन प्रश्न उठता है उसके मूल्यांकन एवं प्रकाशन का। इसके अतिरिक्त यह साहित्य किसी एक विधा पर लिखा हुआ नहीं है, किन्तु वह साहित्य के विविध रूपों में निबद्ध है जो अनुसंधान के महत्वपूर्ण विषय हो सकते हैं। यह साहित्य स्तोत्र, पाठ संग्रह, कथा, रासो, रास, पूजा, मंगल, जयमाल, प्रश्नोत्तरी, मंत्र, अष्टक, सार, समुच्चय, वर्णन, सुभाषित, चौपई, निसानी, जकडी, व्याहलो, बधावा, विनती, पत्री,

आरती, बोल, चरचा, विचार, बात, गीत, लीला, चरित्र, छंद, छप्पय, भावना, विनोद, काव्य, नाटक, प्रशस्ति, धमाल, चौढालिया, चौमासिया, बारामासा, बटोई, बेलि, हिंडोलणा, चूनडी, सज्जाय, बाराखडी, भक्ति, बन्दना, पच्चीसी, बत्तीसी, पचासा, बावनी, सतसई, सामायिक, सहस्रनाम, नामावली, गुरुवावली, स्तवन, संबोधन, मोडलो आदि विभिन्न रूपों में मिलता है। इन विविध साहित्य रूपों में किसका कब आरम्भ हुआ और किस प्रकार विकास और विस्तार हुआ ये शोध के लिये रोचक विषय हो सकते हैं और इन सबकी सामग्री जैन ग्रन्थागारों में मिल सकती है।

विभिन्न विषयों के अतिरिक्त अभी तो सैकड़ों ऐसे कवि जो विद्वानों के लिए अज्ञात बने हुए हैं। ऐसे कवि १४वीं शताब्दी से लेकर १९वीं शताब्दी तक इतनी अधिक संख्या में हैं कि यहाँ पर उनके नाम मात्र उल्लेख करना भी संभव नहीं है। सबसे अधिक कवि १७वीं १८वीं एवं १९वीं शताब्दी में हुए। इसके अतिरिक्त जितने भी लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध कवि हुए वे भी १७वीं एवं १८वीं शताब्दी से ही अधिक संबंधित हैं। इनमें से एक-एक जैन कवि को शोध का विषय बनाया जा सकता है। यही नहीं ब्रह्म जिनदास, यशोधर, ब्रह्म रायमल्ल, बूचराज, छीहल, ठक्कुरसी, बनारसीदास, रूपचन्द्र, भगीतीदास, भूधरदास, दौलतराम कासलीवाल, दानतराय जैसे पचासों कवि तो ऐसे हैं जिनका विविध दृष्टियों से अध्ययन किया जा सकता है। जब सूर, तुलसी, मीरा, जायसी एवं कबीर पर एक नहीं किन्तु पचासों शोध निबन्ध लिखे जा सकते हैं तो इन जैन कवियों पर भी पचासों नहीं तो एक से अधिक शोध निबन्ध तो लिखे ही जा सकते हैं। जैसे जैसे ये कवि विश्वविद्यालयों में पहुँचेंगे विद्वानों का ध्यान उनकी रचनाओं पर जावेगा। अब मैं पचास ऐसे शोध के विषयों की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ जिन पर विश्वविद्यालयों में शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किये जा सकते हैं :—

१. हिन्दी के आदिकाल के जैन रास काव्य
२. कविवर राजसिंह—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
३. ब्रजभाषा का प्रथम कवि सधार एवं उनका प्रद्युम्नचरित
४. महाकवि ब्रह्म जिनदास के काव्यों का भाषागत अध्ययन
५. ब्रह्म जिनदास का रामसीता रास—एक अध्ययन
६. रास काव्य शिरोमणि ब्रह्म जिनदास

परिसंवाद-४

७. १६वीं शताब्दी के हिन्दी जैन कवि
८. हिन्दी के जैन रूपक काव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन
९. कविवर बूचराज—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
१०. हिन्दी के जैन कवियों की बावनियों का उद्भव एवं विकास
११. कविवर ठक्कुरसी—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
१२. ब्रह्म रायमल्ल की रचनाओं का सांस्कृतिक अध्ययन
१३. भट्टारक रतनकीर्ति—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
१४. जैन संत कुमुदचन्द्र—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
१५. नेमि राजुल साहित्य—एक अध्ययन
१६. भट्टारक यशोधर—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
१७. महाकवि बनारसीदास—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
१८. समयसार नाटक का आत्म दर्शन
१९. कविवर रूपचन्द्र—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
२०. हिन्दी गद्य लेखक—पाण्डे राजमल्ल
२१. १७वीं शताब्दी के हिन्दी गद्य निर्माता
२२. बनारसीदास एवं उनके समकालीन कवि
२३. भैया भगवतीदास—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
२४. पंडित भगौतीदास—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
२५. कविवर आनन्दघन—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
२६. महाकवि समयसुन्दर के काव्यों का अध्ययन
२७. पार्श्वपुराण का सांस्कृतिक एवं तात्त्विक अध्ययन
२८. महाकवि भूधरदास के पदों का सांस्कृतिक विवेचन
२९. कविवर दानतराय—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
३०. बारह खड़ी साहित्य
३१. गद्य पद्य निर्माता—महाकवि दौलतराम कासलीवाल
३२. दौलतराम कासलीवाल के काव्यों का सांस्कृतिक अध्ययन
३३. हिन्दी गद्य साहित्य के विकास में महाकवि दौलतराम का योगदान
३४. किशनसिंह—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
३५. कविवर खुशालचन्द काला—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
३६. जैन हिन्दी पुराण साहित्य—सांस्कृतिक अध्ययन

३७. कविवर नेमिचन्द्र—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
३८. जोधराज गोदिका—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
३९. जैन कवियों के पदों का सांस्कृतिक अध्ययन
४०. छप्पय छन्द के विकास में जैन कवियों का योगदान
४१. चूनडी साहित्य के विकास में जैन कवियों का योगदान
४२. पंडित जयचन्द्र छाबड़ा—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
४३. पंडित सदासुख कासलीवाल—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
४४. पारसदास निगोत्या—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
४५. बख्तराम साह के काव्यों का अध्ययन
४६. भक्ति एवं दर्शन प्रधान जैन पूजा साहित्य
४७. पं० दौलतराम—व्यक्तित्व एवं कृतित्व
४८. महाकवि टोडरमल एवं उनके समकालीन कवि
४९. कविवर बख्तावर लाल एवं उनका हिन्दी साहित्य
५०. पाण्डे जिनदास—व्यक्तित्व एवं कृतित्व

उक्त शीर्षकों के अतिरिक्त अभी इतने ही शोध के लिए और विषय गिनाये जा सकते हैं ।

•